IJAER/ November-December 2023/Volume-12/Issue-6 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

भारत में पंचायतीराज व्यवस्था का उद्भव एवं विकास

सीमा
शोधार्थी राजनीति विज्ञान विभाग राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
हेमवती नन्दन बहुगुणा खटीमा (ऊधम सिंह नगर)

डॉ0 गुरेन्द्र सिंह असि0 प्रोफेसर
शोध निर्देशक राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हेमवती नन्दन बहुगुणा
खटीमा (ऊधम सिंह नगर)

1.1 प्रस्तावना

भारत विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों, भाषा–भाषियों, मतों और पन्थों का एक विशाल राष्ट्र है। ऐसी विविधतायें प्रजातन्त्र में ही निभ सकती हैं, निरंकुशतन्त्र में इनका अस्तित्व बना रहना असम्भव है। भारतीय जीवन की विभिन्नताओं की रक्षा करना भारत के कर्णधारों का पवित्र कर्तव्य था जिसका एक मात्र उपाय उनके समक्ष लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना ही थी।

भारत प्राचीन काल से ही ग्रामों का देश रहा है आज भी भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामों में ही रहती है। इस विशाल ग्रामीण समुदाय को स्वतन्त्रता का वास्तविक लाभ पहुंचाने तथा प्रजातन्त्र को प्रत्येक ग्रामीण के दरवाजे तक लाने के लिए भारत में ग्रामीण क्षेत्र में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के आधार पर पंचायती राज की स्थापना की गई।

लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का महत्व अनेक दृष्टियों से स्वीकार किया जा चुका है। इस सिद्धान्त के सर्वमान्य महत्व के साथ–साथ भारत में उसके ग्रामीण स्वरूप अर्थात पंचायतीराज का विशेष महत्व है।

प्रोफेसर सिड़नी वैब का विचार है कि स्थानीय स्वशासन उतना ही प्राचीन है जितने कि पहाड़।[1] यह कथन विश्व के अन्य किसी देश की तुलना में भारत के विषय में अधिक सत्य है। भारत में बहुत प्राचीन काल से ही गांव को सामाजिक संगठन तथा प्रशासन की स्वतन्त्र एवं महत्वपूर्ण इकाई माना जाता रहा है जिसके फलस्वरूप प्रत्येक काल में पंचायतीराज संस्थाओं का किसी न किसी रूप में वर्णन अवश्य मिलता है। निश्चित ही पंचायती राज का इतिहास भारत में बहुत पुराना है जैसा कि डॉ0 एम0 पी0 शर्मा का कथन है कि भारत में गांव पंचायतों का अस्तित्व अत्यन्त प्राचीन काल में भी था। उनका उल्लेख वेदों, महाकाव्यों तथा प्राचीन राजनीतिक साहित्य में दृष्टिगोचर होता है।[2] भारत में अनेक कालों में पंचायती राज धारणा के विकास का अध्ययन तीन भागों में विभाजन करना उचित है– प्राचीन काल, मध्यकाल, ब्रिटिश शासन काल।

1.1.1 पंचायतीराज का अर्थ

लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का व्यावहारिक, प्रशासनिक रूप स्थानीय स्वशासन है। भारत में लोकतन्त्र को वास्तविक बनाने के उद्देश्य से लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के आधार पर स्थानीय स्वशासन की स्थापना की गई है। भारत में स्थानीय स्वशासन दो प्रकार का है– शहरी और ग्रामीण। ग्रामीण क्षेत्र में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के आधार परस्थानीय स्वशासी निकायों का गठन ही पंचायती राज की धारणा है।पंचायती राज प्रणाली का मूल आधार पंचायत है।

बाबू 'श्यामसुन्दर दास द्वारा सम्पादित ''हिन्दी शब्द सागर'' में पंचायत शब्द का अर्थ इस प्रकार बताया गया है– ''किसी विवाद, झगड़े या और किसी मामले पर विचार करने के अधिकारियों या चुने हुए लोगों का समाज–पंचों की बैठक या सभा।''[3]

पंचायती राज शब्द युग्म है। शाब्दिक दृष्टि से पंचायत राजशब्द हिन्दी भाषा के दो शब्दों पंचायत और राज से मिलकर बना है। शब्द पंचायत संस्कृत भाषा के शब्द 'पंचायत' से उत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थपांच जन प्रतिनिधियों के ''समूह का शासन है।''[4] ''कांम्पटन्स एनसाइक्लोपीड़िया'' में पंचायत का अर्थ ''पांच सदस्यों की भारतीय ग्रामपरिषद''[5] बताया गया है। इस प्रकार शब्द–व्युत्पत्ति के दृष्टिकोण से पंचायती राज की धारणा का मंतव्य ग्रामीण क्षेत्र में निर्वाचित व्यक्तियों के समाज द्वारा संचालित स्थानीय शासन से है।

भारत में ग्रामीण क्षेत्र में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के क्रियान्वन के लिए ही पंचायती राज की स्थापना की गई। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना को वास्तविक अर्थ में साकार बनाने के लिए इसे शहरी क्षेत्रों के साथ–साथ ग्रामीण क्षेत्रों में भी क्रियान्वित करना नितान्त आवश्यक समझा गया। विकेन्दीकरण आयोग ने 1909 में अपने प्रतिवेदन में ग्रामीण क्षेत्र में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के आधार परपंचायती राज की स्थापना की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा था किग्राम की उपेक्षा करके केवल नगरपालिकाओं के माध्यम से स्थानीय स्वशासन की स्थापना करना त्रुटिपूर्ण है। ग्राम के अन्दर ही स्थानीय मामलों के प्रशासन के लिए ग्राम पंचायतों की स्थापना करना अत्यधिक आवश्यक है।[6]

पंचायती राज की व्याख्या करते हुए एस0 के0 डे0 ने कहा है कि लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण को भारतीय नाम देने के प्रयास के परिणामस्वरूप ही पंचायती राज का उदय हुआ। पंचायत राज और पंचायती

राज में अन्तर है। जहां पंचायतराज ग्राम स्तर पर सरकार की एक इकाई थी वहीं पंचायती राज एक शासन प्रणाली को प्रदर्शित करता है। यह ग्राम पंचायतों का समूहीकृत रूप और गाम पंचायत का राष्ट्रीय स्तर तक सावयव विकास है। पंचायती राज का वास्तविक अर्थ पारस्परिक सहमति तथा परामर्श के द्वारा प्रशासन है।[7] उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त को ग्रामीण क्षेत्र में क्रियान्वित करने की इच्छा और प्रयास का परिणाम ही पंचायतीराज है। पंचायतीराज वास्तव में शासन की ऐसी प्रणाली को प्रदर्शित करता है जिसमें परिवार के समान पारस्परिक सहमति के आधार पर शासन चलाया जाता है। इसे ग्रामीण स्थानीय स्वशासन भी कहा जा सकता है। दूसरे शब्दों में पंचायती राज ग्रमीण क्षेत्र में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का पर्यायवाची है। सामुदाायिक विकास मन्त्रियों की गोष्ठी को संबोधित करते हुए पंडित जवाहर लाल नेहरू ने पंचायती राज का स्पष्टीकरण अगस्त, 1963 को नई दिल्ली में इस प्रकार किया कि पंचायती राज व्यक्तियों को आत्मनिर्भर बनने को प्रोत्साहित करने की धारणा है। इसका अर्थ ग्रामीण क्षेत्र में सरकार के कार्यों का प्रसार करना है।[8] अतः लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का भारत में ग्रामीण क्षेत्र के लिए क्रियान्वित रूप ही पंचायतीराज है जो सामान्य सहमति पर आधारित स्थानीय स्वशासन के त्रिसोपानीय प्रशासन को प्रदर्शित करता है।

1.1.2 पंचायतीराज का उद्देश्य

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि पंचायत राज का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण स्तर तक सत्ता का विकेन्द्रीकरण करना रहा है। एक राजनीतिशास्त्र वैज्ञानिक द्वारा पंचायत राज के सम्बन्ध में निम्नलिखित तीन सिद्धान्त बताये गये हैं।[9]

- पंचायत राज व्यक्ति और समाज के बीच विशेष समस्याओं का प्रबन्ध द्वारा अच्छे सम्बन्ध स्थापित करता है। व्यक्ति के समाज में भाग लेने की भावना का विकास करता है। ग्रामीण लोगों को राजनीतिक शिक्षा देता हैं और देश की नागरिकता में उपयोगी बनाने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।
- पंचायत राज सरकार के लिए स्वयम् शासित इकाई के रूप में कार्य कर सके यह उसकी स्थापना की ओर एक प्रयास है। जो इस उद्देश्य से लोक कल्याण के लिए लोक प्रशासन की मशीनरी को

उपयोगी बनाया जा सके और उसका विकास किया जा सके ताकि विस्तृत रूप से फैले हुए कार्यों का लोक कल्याणकारी सरकार नियोजित अर्थव्यवस्था के द्वारा पूरा कर सके।

- पंचायत राज लोगों का ध्यान प्रशासन में स्वामियों से हटाने के लिए राजनैतिक पद्धति के रूप में कार्य कर सके। इसका वास्तविक उद्देश्य जनता को अधिक शक्ति का हस्तान्तरण नहीं है अपितु राजनीतिक पार्टियों के अभाव का गांव तक विकास करना है, जो कुछ पार्टियाँ खो चुकी हैं।

स्वतंत्रता के बाद ग्रामीण भारत में पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना से यह प्रत्याशा की गयी थी कि इससे ग्रामीणों में विकास कार्यों के लिए उत्साह आयेगा तथा राजनीतिक एवं विकासात्मक चेतना के द्वारा ग्रामीण सक्रिय एवं जागरूक होंगे। सक्रियता की इस प्रक्रिया के कारण लोगों में व्याप्त उदासीनता समाहा होगी तथा वे जन कल्याण के कार्यों में लगेंगे। बिना उत्तरदायित्व एवं विकास के कार्यों में प्रगति नहीं हो सकती किसी समुदाय का विकास सही अर्थों में तभी हो सकता है, जब वह समुदाय अपनी समस्याओं को समझे, अपनी जिम्मेदारियों को महसूस करें, अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा आवश्यक अधिकारों का प्रयोग करें तथा स्थानीय स्वशासन पर सत्त बौद्धिक सतर्कता बनाये रखें।[10]

इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए बलवन्त राय मेहता दल ने यह राय दी थी कि संवैधानिक चयनित निकायों की स्थापना की जाय तथा उन्हें आवश्यक स्रोतों, शक्तियों एवं अधिकारों का हस्तान्तरण किया जाय। सामुदायिक विकास अभियान के पूर्व ग्रामीण जीवन में सामुदायिक जीवन पद्धति की अनौपचारिक एवं अविमेदित संस्थाए कार्यरत थी, विकास प्रमुख उद्देश्य नहीं थी। पंचायती राज के उद्देश्यों के विषय में सर्वसम्मति एवं विशिष्टता का अभाव रहा है क्योंकि पंचायतीराज के स्वरूप को ही विभिन्न दृष्टियों से देखा गया है एवं इसे निम्न रूपों में व्यक्त किया गया है–

प्रथम

पंचायती राज को वास्तविक एवं तत्कालिक उद्देश्य सामुदायिक विकास कार्यक्रमों का प्रसार एवं उन्हें क्रियान्वित करने का रहा है। पंचायती राज एक तरफ अपने में लोगों की पहल एवं उनके वास्तविक सहभागिता को समाविष्ट करता है और दूसरी ओर सरकारी वित्तीय सहायता, तकनीक सुविधा एवं पर्यवेक्षण से इसे संयुक्त करता है।[11]

द्वितीय

पंचायती राज का उद्देश्य यह भी है कि इसके द्वारा लोगों को जागरूक करके जाति, वर्ण, धर्म और धन के आधार पर निर्मित होने वाले नेतृत्व को परिवर्तित किया जाये। पंचायती राज की स्थापना से यह प्रत्याशा की गयी थी[12] कि परम्परागत नेतृत्व की जगह नया नेतृत्व चुनावों की अवधि में उभरकर सामने आयेगा।

तृतीय

पंचायती राज का यह भी उद्देश्य है कि इसके द्वारा स्थानीय स्वशासन की इकाईयों को स्थापित करना है। यह उद्देश्य लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारणा से सम्बद्ध है। मेहता दल ने लोकतांत्रिक शासन को जनता तक प्रसारित करने की संस्तुति दी थी।[13]

चतुर्थ

राज्य के अतिक्रमण के रूप में पंचायती राज को नियोजित विकास से सम्बन्धित किया गया है। राज्य की नीतियों के निर्देशात्मक सिद्धान्तों से सम्बन्धित संविधान की धारा 40 में कल्याणकारी राज्य एवं पंचायतों को सम्मिलित कर लिया गया है। स्थानीय स्रोतों और जनशक्ति के उपयोग की दृष्टि से पंचायती राज को अपेक्षाकृत उन्नति पद्धति के रूप में माना जाता है।[14]

मेहता ने जनसहभागिता द्वारा ग्रामीण विकास के लिए जिस निश्चित स्वरूप को प्रस्तुत किया है इसको कुछ लोगोंने संरचनात्मक परिवर्तन एवं दर्शन के रूप में देखा तो कुछ ने इसे विकास कार्य करने वाली संस्था के रूप में देखा है। जे. पी. का विचार इस पर वृहत् प्रकाश डालता है।[15]

एपिलवी ने नारायण के विचार की आलोचना करते हुए लोकतंत्रीय विकेन्द्रीकरण को विकेन्द्रीत लोकतंत्र की संज्ञा दे डाली है।[16] एस.के.डे. ने पंचायती राज संस्था को आर्थिक, राजनैतिक तथा सामाजिक लोकतंत्र हेतु एक बहुद्देशीय संस्था माना है।[17] महात्मा गांधी ने कहा है कि पंचायतों को उनका पुराना स्वरूप दिये बिना और देश के सम्पूर्ण शासन तंत्र को पंचायती साँचे में ढाले बिना देश का उद्धार सम्भव नहीं है। गांधी जी पंचायत को राज्य की वास्तविक इकाई मानते थे। पंचायती राज प्रणाली भारतीय जनतंत्र की बुनियादी इकाई है।[18]

पण्डित नेहरु ने कहा कि लोकतंत्र की किसी भी सच्ची व्यवस्था का आधार स्थानीय स्वशासन ही है और होना भी चाहिए हमें लोकतंत्र के बारे में चोटी से सोचने की कुछ आदत सी पड़ गयी है और नीचे से लोकतंत्र के बारे में हम कोई खास सोच विचार नहीं करते, जब तक लोकतंत्र का इस नीचे के आधार पर निर्माण नहीं किया जायेगा। वह शिखर पर सफल नहीं होगा।[19]

उपर्युक्त विश्लेषण से यह तथ्य प्रकाश में आता है कि पंचायती राज व्यवस्था का उद्देश्य ग्रामीण जनमानस को सर्वतोन्मुखी विकास ही है। वस्तुतः ग्रामीण जन में जागरूकता, चेतना, सहभागिता उनकी समस्याओं का निरूपण तथा सर्वांगीण विकास ही पंचायती राज का मुख्य उद्देश्य है।

सर्वप्रथम 1959 में पंचायती राज राजस्थान में कायम हुआ, जिसका उद्घाटन करते हुए 2 अक्टूबर 1959 को पं. जवाहरलाल नेहरू ने इसे एक क्रान्तिकारी घटना बताया। तत्पश्चात् वह आन्ध्रप्रदेश, असम, महाराष्ट्र, गुजरात, मैसुर, पंजाब, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बंगाल, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा और दिल्ली में परिचालित किया गया। जयपुर में दिनांक 7 अक्टूबर 1984 को अखिल भारतीय पंचायत राज सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने कहा था आर्थिक विकास का लाभ हर व्यक्ति तक पहुँचाने के लिए जरूरी है कि लोगों विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वालों में उत्तरदायित्व की भावना जागृत है।[20]

1.2 पंचायती राज व्यवस्था का उद्गम एवं विकास

पंचायत एक सर्वमान्य संस्था के रूप में प्राचीनकाल से ही भारतीय जनमानस में अधिष्ठित रही है। प्राचीन इतिहास से यह विदित होता है कि उस काल में जनता की समितियों द्वारा ही शासन कार्य चला करते थे। ई. वी. हैवेल के अनुसार– प्रजातंत्र की आधारशिला ग्राम थे जनता के प्रतिनिधियों की एक वृहत्तर सभा हर साल अपनी एक बैठक करती थी। इन सभाओं की राय को बड़े आदर की दृष्टि से देखा जाता था।[21]

चीनी यात्री फाह्यान तत्कालीन ग्राम संगठन से अत्यधिक प्रभावित था उसने लिखा है– ग्रामों का संगठन आर्थिक तथा रक्षात्मक स्वावलम्बन के विचारों पर आधारित होता है। यह ग्राम राज्य का ही प्रत्यक्ष फल है। वे लोग स्वेच्छा से बन्धुता के नियमों का पालन करते हैं और बड़े शान्तिप्रिय तथा उन्नतशील हैं।[22]

पंचायती जीवन के बारे में कार्लमार्क्स का दृष्टान्त अत्यन्त ही विशिष्ट है ये ग्राम समुदाय अपने आप में परिपूर्ण तथा आत्मनिर्भर है। भारत के विभिन्न भागों में आवश्यकता के अनुसार विभिन्न प्रकार के ग्राम समुदाय पाये जाते हैं।[23]

इस प्रकार पंचायती व्यवस्था का विस्तृत अध्ययन विश्लेषण एवं आकलन करने से पूर्व उचित होगा कि इस व्यवस्था की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का संक्षिप्त अवलोकन किया जाये और पंचायती राज व्यवस्था के विकास पर चर्चा की जाये। इस प्रकार निम्न भागों में बांटकर किया जाना अधिक तर्कसंगत लगता है–

(क) प्राचीन काल (ख) मध्यकाल

(ग) ब्रिटिश काल (घ) स्वतंत्र भारत काल

1.2.1 प्राचीन काल में पंचायती राज व्यवस्था एवं उसका विकास

स्थानीय शासन का अध्ययन ग्राम शासन व्यवस्था के अध्ययन के अभाव में सम्भव नहीं है। प्रारम्भिक काल में प्रशासकीय व्यवस्था के लिए राज्य ग्रामों में विभाजित रहते थे अथवा ग्राम ही तत्कालीन राजनीति में राज्य सम्बन्धी संगठन के प्रमुख भाग थे। इस सम्भावना की पुष्टि वैदिक साहित्य से होती है। ग्राम शब्द ऋग्वेद में भी आया है।[24]

सम्भवतः इस प्रारम्भिक काल में बड़े–बड़े नगरों अथवा पुरों का निर्माण नहीं हुआ था और हुआ भी था तो उनकी संख्या अति न्यून थी अथवा उनका स्थान भी नगण्य था। ऋग्वेद में ग्रामों की समृद्धि के लिए तो प्रार्थना की गई किन्तु नगरों अथवा पुरों का कदाचित ही कहीं उल्लेख हुआ हो।[25]

ऋग्वेद के दसवे मण्डल के अन्तिम सूत्र के सम्बन्ध में राधा कुमुद मुखर्जी ने लिखा है कि इस सूत्र में जिस आराध्य की आराधना की गई है उसे प्रजातंत्र कहा जा सकता है। डॉ. के. पी. जायसवाल के शब्दों में प्रारम्भिक काल में जिस राष्ट्रीय जीवन एवं क्रियाओं का अभिलेख मिलता है, वे जनसभाओं एवं संस्थाओं द्वारा सम्पन्न की जाती थी।[26] मनु ने भी इसी प्रकार कहा है कि दो तीन या पांच ग्रामों के बीच में राजा को रक्षकों का एक मध्य स्थान नियुक्त करना चाहिए। इसको 'गुल्म' कहा गया है। इसी प्रकार एक सौ ग्रामों के बीच में संग्रह होता है। ग्रामों में अधिकारियों की नियुक्ति की जानी चाहिए। राजा को किसी मंत्री द्वारा इन अधिकारियों के कार्यों एवं उनके पारस्परिक कलह आदि की देखभाल करनी चाहिए।[27]

ग्राम स्वशासन के लिए गाँव की मुखिया गांवों की रखवाली करता था तथा ग्राम निवासियों के झगड़ों को सुलझाता था, मालगुजारी एवं पुलिस का कार्य भी देखता था। गांव में दो प्रकार के चौकीदार होते थे। सरहदी गांव सरहद की निगरानी रखते थे पुरोहित गांव देवताओं की पूजा करता था। पाठशाला का पण्डित लड़कों को पढ़ाता था, लोहार तथा बढ़ई काश्तकारों की औजार बनाते थे तथा रिहायशी भवनों का निर्माण करते थे। इसके अलावा गांव–गांव में धोबी, नाई, ग्वाल, वैद्य, पतुरिया, गवइया और चारण भी रहते थे। इनमें मुखिया पटवारी एवं चौकीदार मुख्य कर्मचारी समझे जाते थे। गांव में पंचायत ऐसे व्यक्ति को मुखिया नियुक्त करती थी, जिसे गांव के लोग इज्जत की निगाह से देखते थे।[28]

ऋग्वेद काल में ग्राम विकास की तीन अवस्थायें थी जिसमें ग्राम, ग्रामवासियों तथा राजा और प्रशासन के बारे में उल्लेख मिलता है।[29] ग्राम विकास की प्रारम्भिक अवस्था 'यायवरीय' थी। स्थायी निवास विहिन संचरण शील ग्रामों का उल्लेख ऋग्वेद के अनेक संदर्भों में प्राप्त होता है जहाँ ग्राम शब्द का अर्थ जनसमूह मात्र है वैदिक युग के संचरणशील जनसमूहों के वाहनों का उपयोग अस्थाई निवास के रूप में करना प्रारम्भ किया, जो कि अनेक शब्दों के भाषा वैज्ञानिक विवेचन से प्रमाणित होता है। इस दृष्टि से रथयज श्स्वक्षयःश गततम् और अनस आदि शब्दों में महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य निहित है। ग्राम विकास की तीसरी अवस्था ध्रुवा स्थिति अथवा स्थायी निवास की है। इसका विकास दो दिशाओं में दिखायी देता है।[30]

अब ग्रामों का निर्माण व्यवसाय, जाति प्रशासनिक, सामाजिक आवश्यकता कर व्यवस्था धार्मिक दान एवं जनसंख्या आदि के आधार पर किया जाने लगा और इस प्रकार ऐतिहासिक काल तक विभिन्न प्रकार के ग्राम सन्निवेश विकसित हुए। जातक साहित्य के श्रेष्ठ ग्राम, ब्राह्मण ग्राम, आरामिक ग्राम आदि का उल्लेख मिलता है।

सतयुग में भी जो वैदिक युग के नाम से विख्यात है और जिसकी यद्यपि कोई निश्चित तिथि नहीं बतलायी जा सकती, परन्तु विद्वानों के अनुसार हजारों, लाखों वर्ष पूर्व का युग था। गांवों में अधिक संख्या कृषकों की होती थी तथा सेवा कर्म करने वालों की संख्या भी लगभग कृषकों के बराबर भी हुआ करती थी। ग्रामों में ब्राह्मणों तथा रक्षा कर्म करने वाले क्षत्रियों की संख्या कम होती थी ग्रामों में मुख्यतः चार वर्ग ही दिखायी देते थे– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र। वेदों में आर्य शब्द का उल्लेख मिलता है, जिसका अर्थ कृषक से ही लगाया जाता है।[31]

सतयुग के आरम्भ में बहुत काल तक किसी ऊपरी हुकुमत या शासन की आवश्यकता न पड़ी होगी, क्योंकि प्रजा में अपने – अपने कर्तव्य पूरा करने का भाव था और धर्म बुद्धि थी परन्तु धीरे–धीरे लोभ का

विस्तार हुआ तथा जिसकी लाठी उसी की भैंस वाला शासन चलने लगा। परन्तु कुछ विद्वान लोग समाज व्यवस्था चलाने के ध्येय से प्रजापति के पास गये जिस पर पितामह ब्रह्मा ने बहुत बड़े धर्मशास्त्र की रचना की और प्रजापति ने मनु का सहारा लिया। मनु ने इसके लिए राजा, राज्य तथा समाज पर विस्तृत प्रबल लेख लिखे, जिससे मनुस्मृति के नाम से जाना जाता है।

इसके पश्चात् त्रेता तथा द्वापर का युग आता है परन्तु इस काल में भी वही कृषि सामाजिक एवं ग्राम व्यवस्था देखने को मिलती है। सोने, चांदी तथा धातुओं की खुदाई एवं उपयोग के प्रमाण मिलते हैं। तत्पश्चात् कलयुग का प्रारम्भ होता है जिसमें प्रारम्भ में ग्राम के रहने वाले किसान सुखी और धनी थे।

1.2.2 मध्यकाल में पंचायती राज का विकास

मध्यकालीन भारत में पंचायतीराज सर्वदेशीय संस्था विभिन्न विदेशी आक्रमणों से आक्रान्त रही है परन्तु पंचायती संगठन को कोई ठेस नहीं पहुँची। शासकों ने अपने हित में पंचायतों का काफी उपयोग किया। मुसलमानों ने भारत की परम्परागत ग्राम संस्थाओं का उपयोग करना ही उचित समझा।[32]

अब से लगभग 2500 पूर्व भगवान बुद्ध का समय था। गांव के सम्बन्ध में बुद्धमत के ग्रन्थों से यह पता चलता है कि भारत का समाज उस काल में ग्रामीण ही था, किसान लोग अपने–अपने क्षेत्रों के मालिक थे। परन्तु गांव के सब लोग मिलकर उसमें उचित भाग लेते थे। गांव का एक मुखिया होता था जिसे भोजक कहते थे। भोजक को कुछ कर और दण्ड धनराशि मिल जाया करती थी। गांव के सब रहने वाले मिलकर सलाह करते थे उसमें भोजक भी शामिल होता था।[33]

बौद्ध काल समाप्ति पर प्रायः सभी कारीगर और कलाओं की पंचायतें गठित थी, जिनमें बढ़ईयों, लुहारों, खाल सिलने वालों और चित्रकारों की पंचायतों का विशेष उल्लेख है। प्रत्येक पंचायत का सरपंच 'जेठक' कहलाता है। जातक में किये गये विश्लेषण से यह परिलक्षित होता है कि पंचायत का सरपंच राज दरबार में रहने वाला एक बड़ा मंत्री होता था। 'जेठक' के सिवाय सरपंच को प्रमुख (प्रमुख या सभापति) भी कहते थे।[34]

इतिहास लिखने वालों के निकट बुद्धकाल का अंत उस समय समझा जाता है जब चन्द्रगुप्त मौर्य गद्दी पर बैठा और शासन की असली बागडोर चाणक्य के हाथ में आयी। इस प्रकाण्ड पण्डित ने 'अर्थशास्त्र' नामक पुस्तक लिखी, जिसके अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि गांवों के कई तरह के विभाग किये गये

थे। प्रथम कोटि मध्यम कोटि और सबसे नीचे कोटि के सिवाय ऐसे भी गांव थे, जिन्हें अन्न, पशु सेना, जंगल की पैदावार आदि किसी रूप में कोई कर नहीं देना पड़ता था।[35]

हर गांव में चौपाल और दालाने पंचायतों के काम के लिए बनी होती थी।और हर गांव का भीतरी अर्थशास्त्र बिल्कुल स्वतंत्र होता था।[36] गांव के भीतरी बन्दोबस्त में किसी बाहरी का हाथ बिल्कुल नहीं होता था, गांव वाले सब बातों का निपटारा स्वयं कर लेते थे।[37] पंचायतों का संगठन उस समय इतने महत्व का था कि उसके लिए संघवृत्त नाम का अधिकरण ही अर्थशास्त्र में अलग रखा गया था। छोटी–छोटी पंचायतों को एकत्र करके लोगों ने संघ बना रखे थे।[38] चाणक्य के पश्चात् कुशानों का राज्य उत्तर में था और आंध्रो का दक्षिण में। इनके काल में पहले की तरह भार की बहुत बड़ी आबादी गांवों में रहती थी। गांव 'धोधो' और पल्लियों में विभक्त था। गांव का मुखिया अंध्रो के राज्य में सरकारी तौर पर रखा जता था। वह झगड़ों का निपटारा भी करता था और राज्य के लिए उगाहता था। जब तक कर इत्यादि राजा को मिलता रहता था तब तक गांव के काम काज में वह किसी प्रकार की दखलअन्दाजी नहीं करता था। धर्मशास्त्र भी यही कहता है कि गांव सभी तरह के स्वतंत्र स्वशासन की व्यवस्था है।[39] महाभारत काल में पंचायती का बड़ा महत्व था महाभारत में लिखा है कि पंचायत के राज की शक्ति को प्रधान रूप से सहारा मिलता था।[40] गुप्तकाल में भी पंचायते संगठित थी।[41] पंचायत होने और रीति पर काम होने का प्रमाण इन्दौर में मिले हुए स्कंदगुप्त के एक ताम्र पात्र से मिलता है। किसानों के कारीगरी की कलावतों की, साहुकारों की, नटों और सन्यासियों की पंचायतें संगठित थी।[42] गुप्त काल के बाद ही हर्ष का समय आता है। हर्ष के समय में भी खेती बारी की सम्बन्ध में सारे काम ज्यों के त्यों होते रहे। बृहस्पत्ति संहिता में पता चलता है कि गांव वाले मिलकर पंचायत बनाते थे जब कारीगर अपनी पंचायत स्थापित करते थे तो एक पंचायत लिख लेते थे, जिसमें कोई खटक की बात न रहे और सब लोग अपने कर्तव्यों में बंधे रहें।[43]

राजपुताना में मुगलकाल में पंचायतों के गठन के विषय में शासकों और उनके अधिकारियों के मध्य हुए पत्र व्यवहार से आसानी से जानकारी मिलती है।[44] यह कहना तो कठिन है कि किन परिस्थितियों में ग्राम पंचायत में सभी सदस्यों को सम्मिलित किया गया अथवा पंचायत गांव की जनसंख्या के गिने–चुने लोगों की संस्था रही। इसमें कोई संदेह नहीं कि सर्वसाधारण की हित के मसले पर पूरे ग्रामीण सम्प्रदाय की बैठक बुलायी जाती थी और सामान्य परिस्थितियों में रोजमर्रा का कार्य एक छोटी परिषद् द्वारा कुछ उपसमितियों के माध्यम से किया जाता था।[45]

हर्ष के शासनकाल के बाद विदेशियों ने भारत पर आक्रमण करना शुरू कर दिया। भारत पर युनानी, इरानी, तुर्क, शक, हूण, जय, तुगलक, लौद खिलजी, गुलाम और मुगलों के आक्रमण हुए। यहाँ की शिक्षा–दीक्षा, आचार–विचार, रहन–सहन और राज्य कार्य पद्धति में परिवर्तन हो गया, परन्तु जिले और गांवों को केन्द्र द्वारा नियुक्ति सुबेदार, अमिल गुजार, मुकादम और पटवारियों के अन्तर्गत रखा जाता था।[46]

ग्रामीण स्तर पर लगान वसूल करने का काम मुकदमा का था, पटवारी एक दूसरा प्रमुख कर्मचारी था।[47] इस शासन काल में पंचायती राज व्यवस्था में जमींदार या जागीरदारी का विकास हुआ तथा इस प्रथा के अधीन समृद्ध किसान या तो स्वयं कर लेकर या अपने एजेन्टों से कर वसूल कर अन्य ग्रामीणों पर नियंत्रण करता था। व्यवहारतः पंचायतों का क्रियाकलाप इन्हीं जमींदारों या जागीरदारों तथा सम्पन्न किया जाने लगा। भूमिहीन मजदूर आदि के लिए न्याय पाना कठिन हो गया था।[48]

विक्रम की 13वीं शताब्दी में शासक की सुविधा के लिए देश भिन्न–भिन्न भागों में बंटा हुआ था। मुख्य विभाग, मुक्ति (प्रांत) विषय (जिला) और ग्राम थे। सबसे मुख्य संस्था ग्राम संस्था थी। गांव के लिए वहाँ की पंचायत ही सब कुछ काम किया करती थी। केन्द्रीय सरकार का उससे सम्बन्ध रहता था। ये ग्राम संस्थाएं एक छोटी सी प्रजातंत्र थी। इनमें प्रजा अधिक थी। मुख्य सरकार के अधीन होते हुए भी ये एक प्रकार से स्वतंत्र थी।[49]

चोल राज के प्रथम शिलालेख से 150 गांवों में ग्राम सभाओं के होने का पता चलता है। इन सभाओं के अधिवेशन के लिए बड़े–बड़े भवन होते थे। ग्राम सभाओं के दो रूप विचार सभा और शासन सभा रहते थे। सम्पूर्ण सभा के सदस्य कई समितियों में विभक्त कर दिये जाते थे। मध्य भारत में बहमनी राज्यों के समय से ही दशा अच्छी थी, उस समय गांव अपना स्वतंत्र शासन रखते थे हर गांव में पंचायत रहा करती थी। जिसका सरपंच उत्तर भारत में चौधरी कहलाता था और दक्षिण भारत में अयंगर कहलाता था। यह अयंगर या मुखिया पंचायत की ओर से छोटे–छोटे मुकदमों के फैसले करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि यही मुखिया या अयंगर कालान्तर में जमींदार बन गये।

प्रारम्भ में जब मुसलमानों ने जब भारत पर चढ़ाई की तो यहां से बहुत सा धन लूट ले गये। पहले मुसलमान बादशाहों में विजय की लालसा इतनी रहती थी कि वे बन्दोबस्त की ओर ध्यान नहीं देते थे। अलाउद्दीन के समय शाही भण्डारों और खानों में अनाज रखा जाता था और अकाल के समय सस्ता बिकता था, परन्तु बाद में उसके बनाये कानून टूट गये। मुहम्मद तुगलक के समय में नकली सिक्कों ने बहुत नुकसान पहुँचाया। 14वीं शताब्दी के अन्त तक देश की दशा बिगड़ने लगी। व्यापार और खेती की दशा

उतार पर हुई तो अकबर का राज्यकाल पिछले दो हजार बरसों के भीतर सब तरह से बहुत अच्छा समझा जाता है। यह समय अब से लगभग 400 वर्ष पहले का है। जहाँगीर और शाहजहाँ तो अकबर के पदचिन्हों पर चलते थे।[50] औरगंजेब के समय में अवनति का दौर प्रारम्भ हुआ और उसके बाद में बादशाहों ने तो लुटिया ही डुबाई। शाहजहाँ ने दाराशिकोह को राजगद्दी पाने के लिए बीमारी में उपदेश किया कि किसानों को और सेना को खुश रखना। औरगंजेब अपनी पूर्वजों की अपेक्षा अधिक कट्टर था। हिन्दुओं पर उसकी कड़ी निगाह थी। उसने सारी हिन्दु प्रजा पर जजिया कर लगाया और मुसलमानों को पक्षपात किया। मध्यकाल से पूर्व तक भारत में सभी गांव आत्मनिर्भर थे। पंचायतों में पंचों की आज्ञा का पालन करना किसी कानून से कम नहीं समझा जाता था। उन्हें नियम बनाने और उनका उल्लघंन करने पर अधिकारियों को दण्ड देने का पूर्ण अधिकार था। उन्हें कार्यपालिका, न्यायपालिका के व्यवहारिक अधिकार प्राप्त थे। इस शासन काल के अन्तर्गत हिन्दू राजाओं के यहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय शासन विकसित था। अर्थात् पंचायते न्यायपालिका तथा प्रशासनिक दायित्व निभाती थी। पालिल एक प्रकार के गांव का प्रधान ही था। कुलकरणी उनका लिपिक था, जो सदैव ब्राह्मण ही होता था। गांव के अपने चौकीदार लिंपिक और खजान्ची आदि हुआ करते थे।[51]

मुगलशासन काल पंचायती शासन व्यवस्था का पतन हुआ। ग्रामीण शासन व्यवस्था में जमींदार या जागीरदार का विकास हुआ। व्यवहारतः पंचायत का क्रियाकलाप इन्हीं जमींदार या जागीरदारों द्वारा सम्पन्न किया जाने लगा और भूमि ही मजदूरों आदि के लिए न्याय पाना कठिन हो गया था।[52]

ई. वी. हैवेन ने लिखा है कि 'ग्राम प्रजातंत्र की आधारशिला थे।' जनता के इन प्रतिनिधियों की प्रतिवर्ष एक बैठक होती थी जिसके निर्णयों तथा कार्यों को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। पंचायत प्रणाली भारत में आर्यों के आक्रमण से पूर्व भी प्रचलित थी। आइने अकबरी के हिदायतों से भी इस बात की पुष्टि होती हैं कि मुस्लिम काल में शासन द्वारा देश की पंचायती परम्परा का संरक्षण किया गया। समय के परिवर्तन के साथ तथा सरकार के केन्द्रीयकरण होने के कारण ग्राम पंचायतों की शक्तियों का ह्रास होने लगा। भारतीय ग्रामीण समुदाय के बारे में यह धारणा प्रसिद्ध रही है कि भूतकाल में भारतीय ग्राम समुदाय हर प्रकार से आत्मनिर्भर थे। फलतः ये अन्य समुदाय से अलग अपना जीवन स्वतंत्र रूप से व्यतीत करते थे। यही इनका गणतंत्रात्मक रूप था जो लोकतांत्रिक पद्धति पर विकसित होकर ग्रामीण समाज की स्वशासित संस्था के रूप में आवश्यक अंग बनायी गई।

सन्दर्भ सूची

1. स्थानीय सरकार पहाड़ियो जितना पुराना है. सिडनी वैब।
2. डॉ. एम.पी. शर्मा, स्थानीय स्वशासन, और यूपी में स्थानीय वित्त, पृष्ठ 26।
3. हिन्दी शब्द सागर, बाबू श्याम सुन्दर दास, व्यास पब्लिकेशन पृष्ठ 922।
4. वी0एस0 तोमर, पंचायती राज इन इण्डिया, लिटरेचर ऑन फ्यूचर ट्रेन्डस एण्ड प्रोस्पेक्टस, दिल्ली, 1991, पृष्ठ 10।
5. पांच सदस्यों की भारतीय ग्राम परिषद कॉम्पटन का विश्वकोष, पृष्ठ 456।
6. इंडियन जर्नल ऑफ पोल, अनुसूचित जाति, वॉल्यूम, टप्प नंबर अप्रैल –जून 1946, पृष्ठ 534।
7. एस.के.डे. पंचायती राज सिन्थेसिस, ओरियन्ट लॉगमैन, 1969, पृष्ठ 84।
8. जवाहर लाल नेहरू उद्घाटन भाषण, 5 अगस्त, 1963 (स्वशासन मंत्रियों के सम्मेलन में) द्वारा उद्धृत पंचायत राज पूर्वोक्त, पृष्ठ 102।
9. के.एस. वी. रमन, शविल पंचायत राज कमश कुरुक्षेत्र, खण्ड 11. 18, 2 अक्टूबर, 1962, पृष्ठ 46–48.
10. रिपोर्ट आफ द टीम टू स्टडी कम्यूनिटी प्रोजेक्ट एण्ड नेशनल एक्सटेंशन एशिया, 1957, पृष्ठ 23।
11. सी.वी. भावरी पोलिटिकल पार्टी एवं पंचायती राज सम थ्योरीटिकल कन्सीडरेशन द्वारा उद्धृत इकबाल नारायण पृष्ठ 310।
12. जियाउद्दीन व जॉन, पंचायती राज एण्ड डेमोक्रेसी द्वारा उद्धृत इकबाल नारायण, पृष्ठ 262।
13. बलबन्त राय मेहता समिति की लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की अवधारधाणा, पूर्वोक्त।
14. सी.वी. भावरी द्वारा उद्धृत इकबाल नारायण हिन्द पब्लिशिंग हाऊस पृष्ठ 2।
15. जे.पी. नारायण, ली फर रिकान्शट्क्शन आफ इण्डियन पॉलिसी, आई. जे. वी. आई, 1959।
16. पॉल.एच. एपिलवी समथॉट ऑन Decentralization आई. जे. वी. आई 1962(4)जे. वी. आई 443, 55।
17. एस.के.डे. पंचायत राज सिन्थेसिस, ओरिसन्ट लांगमैन 1969 पृष्ठ 26।
18. महात्मा गांधी रू पंचायत राज, पूर्वोक्त, पृष्ठ 11।

19. जवाहर लाल नेहरू उद्घाटन भाषण, 5 अगस्त, 1963 (स्वशासन मंत्रियों के सम्मेलन में) द्वारा उद्धृत पंचायत राज पूर्वोक्त, पृष्ठ 102।

20. नव भारत टाइम्स, नई दिल्ली, 8 अक्टूबर, 1984।

21. ई. वी. हैवेल द्वारा उद्धृत पंचायत राज (सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली) 1965, पृष्ठ 59।

22. चीनी यात्री फाहयान द्वारा उद्धृत पंचायती राज पृष्ठ 63।

23. कार्ल मार्क्स, कैपिटल द्वारा पंचायत राज, पृष्ठ 64।

.24. ऋग्वेद 1/11411 तथा 515418 (मण्डल, सूक्त मंत्र) भाष्कर वेंकटमाधव, विश्वेश्रानन्द वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर, 1964।

25. ऋग्वेद 1/114110/016211 तथा 10110715 (मण्डल, सूक्त मंत्र) भाष्कर वेंकटमाधव, विश्वेश्रानन्द वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर, 1964।

26. डा. के.पी. जायसवाल रू पालिसी, 1943, पृष्ठ 12।

27. मनुस्मृति (71114) (अध्याय श्लोक), सम्पादक, गंगानाथ झा, इण्डियन प्रेस प्रयाग, 1932।

28. शुक्ला, ए. के. रू ग्राम संधार (1938) गंगा फाइन आर्ट प्रेस, पृष्ठ 171।

29. अग्रवाल वासुदेव शरण, इण्डिया एजनोन टू पाणिनी, पृष्ठ 63 (उद्धृत) प्राचीन भारत में ग्राम एवं ग्राम जीवन (सम्पा.) सच्चिदानन्द मिश्र, पृष्ठ 88. 89 (1984)।

30. वैदिक इन्डेक्स भाग. 2, पृष्ठ 494 (उद्धृतं) साइन्टिफिक अमेरिकन, प्रो. डी. डी. कोसाम्बी एण्ड 261 सं.2, पृष्ठ 109. 111 फरवरी, 1997।